

॥ उत्तम आकिंचन्य ॥



भारतं गौरवंतु तीर्थ स्थान

"शैतन्य धाम"

॥ शैतन्य शैतन्यं राधायं धाम ॥



श्री उत्तम आकिंचन्य धर्म पूजन

स्थापना

(छंद-कुण्डलिया)

अपरिग्रह का मुकुट है निज आकिंचन धर्म।
जो भी इसको धारते हो जाते निष्कर्म॥
हो जाते निष्कर्म आत्मा को ही ध्याकर।
त्रिलोकाग्र पर जा विराजते शिवसुख पाकर॥
वे ही ध्रुवसुख पाते जो होते हैं निस्पृह।
सच्चे मुनियों को ही भाता है अपरिग्रह॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमआकिंचन्यधर्माङ्ग अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमआकिंचन्यधर्माङ्ग अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमआकिंचन्यधर्माङ्ग अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

॥ उत्तम आर्किचन्य ॥



भारतनु गौरववन्तु तीर्थ स्थान

"शैतन्य धाम"

॥ शैतन्य धाम शैतन्यवन्तु राजधानी धाम



श्री उत्तम आर्किचन्य धर्म पूजन

अष्टक

(छंद-विधाता)

चढ़ाऊँ नीर आर्किचन बनूँ मैं निस्पृही स्वामी ।
जन्म मरणादि दुख नाशूँ स्वपद पाऊँ परम नामी ॥
परिग्रह से रहित है धर्म आर्किचन परम उत्तम ।
मुनीश्वर धारते इसको अनिच्छुक भाव ले अनुपम ॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमआर्किचन्यधर्माज्ञाय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं नि. ।
शुद्ध चंदन चढ़ाऊँ मैं प्राप्त कर धर्म आर्किचन ।
भवातप ज्वर विनाशूँ मैं हरूँ भव राग के बंधन ॥
परिग्रह से रहित है धर्म आर्किचन परम उत्तम ।
मुनीश्वर धारते इसको अनिच्छुक भाव ले अनुपम ॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमआर्किचन्यधर्माज्ञाय क्रोधकषाय विनाशनाय चंदनं नि. ।
शुद्ध अक्षत चढ़ाऊँ मैं आर्किचन भावना भाऊँ ।
प्राप्त अक्षय स्वपद करके परम शिव सौख्य उपजाऊँ ॥

॥ उत्तम आर्किचन्य ॥



भारतनु गौरववन्तु तीर्थ स्थान

"जैतन्य धाम"

॥ जैतन्य जैतन्यवन्तु राजधानी धाम



श्री उत्तम आर्किचन्य धर्म पूजन

परिग्रह से रहित है धर्म आर्किचन परम उत्तम।

मुनीश्वर धारते इसको अनिच्छुक भाव ले अनुपम॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमआर्किचन्यधर्माज्ञाय मानकषाय विनाशनाय अक्षतं नि.।

आर्किचन पुष्प की महिमा काम शर कष्ट हरती है।

शील गुण की प्रदाता है सौख्य जो उर में भरती है॥

परिग्रह से रहित है धर्म आर्किचन परम उत्तम।

मुनीश्वर धारते इसको अनिच्छुक भाव ले अनुपम॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमआर्किचन्यधर्माज्ञाय मायाकषाय विनाशनाय पुष्पं नि.।

आर्किचन भावमय नैवेद्य मैंने आज पाये हैं।

अनाहारी स्वपद पाने स्वयं के गीत गाये हैं॥

परिग्रह से रहित है धर्म आर्किचन परम उत्तम।

मुनीश्वर धारते इसको अनिच्छुक भाव ले अनुपम॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमआर्किचन्यधर्माज्ञाय लोभकषाय विनाशनाय नैवेद्यं नि.।

॥ उत्तम आर्किचन्य ॥



भारतजु गौरववतु तीर्थ स्थान

"शैतन्य धाम"

शैतन्य धाम शैतन्यवतु राजधानी धाम



श्री उत्तम आर्किचन्य धर्म पूजन

आर्किचन दीपं ज्योतिर्मय मोह भ्रम तम विनाशक हैं।
घातिया कर्म नाशक हैं ज्ञान निज पर प्रकाशक हैं॥
परिग्रह से रहित है धर्म आर्किचन परम उत्तम।
मुनीश्वर धारते इसको अनिच्छुक भाव ले अनुपम॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमआर्किचन्यधर्माज्ञाय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं नि.।

आर्किचन भाव की निज धूप उर में मोद भरती है।
शुक्लध्यानी बनाती है कर्म वसु घात करती है॥
परिग्रह से रहित है धर्म आर्किचन परम उत्तम।
मुनीश्वर धारते इसको अनिच्छुक भाव ले अनुपम॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमआर्किचन्यधर्माज्ञाय विभावपरिणति विनाशनाय धूपं नि.।

आर्किचन भावना के फल मोक्ष फल के प्रदाता हैं।
राग-द्वेषादि भावों के ये ही तो पूर्ण घाता हैं॥
परिग्रह से रहित है धर्म आर्किचन परम उत्तम।
मुनीश्वर धारते इसको अनिच्छुक भाव ले अनुपम॥

ॐ ह्रीं श्री उत्तमआर्किचन्यधर्माज्ञाय महामोक्षफलप्राप्ताय फलं नि.।

॥ उत्तम आकिंचन्य ॥



भारतनु गौरववतु तीर्थ स्थान

"जैतन्य धाम"

॥ जैतन्य जैतन्यवतु राजधानी धाम



श्री उत्तम आकिंचन्य धर्म पूजन

आकिंचनभाव के निज अर्घ्य महिमामय बनाऊँगा ।
स्वपद पाऊँ अनर्घ्य अपना ध्यान फल उर सजाऊँगा ॥
परिग्रह से रहित है धर्म आकिंचन परम उत्तम ।
मुनीश्वर धारते इसको अनिच्छुक भाव ले अनुपम ॥
ॐ ह्रीं श्री उत्तमआकिंचन्यधर्माज्ञाय अनर्घ्यपदप्राप्ताय अर्घ्य नि. ।

अर्घ्यावलि

(छंद-दिग्पाल)

संसार यह अथिर है ध्रुव है न रंच मानो ।
माता पिता त्रिया सुत सब ही अनित्य जानो ॥
चक्री के भोग भी तो हैं नाशवान सारे ।
उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे ॥१॥
ॐ ह्रीं श्री अनित्यभावनारूपोत्तमाकिंचन्यधर्माज्ञाय अर्घ्य नि. ।

॥ उत्तम आर्किचन्य ॥



भारतनु गौरववतु तीर्थ स्थान

"जैनधाम"

॥ जैनधाम जैनधाम जैनधाम



श्री उत्तम आर्किचन्य धर्म पूजन

जब आयु पूर्ण हो तो कोई न शरण होता ।
यह मंत्र तंत्र औषधि धन आदि व्यर्थ होता ॥
कोई न सहायक हैं इंद्रादि देव सारे ।
उत्तम है धर्म आर्किचन पार जो उतारे ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री अशरणभावनारूपोत्तमार्किचन्यधर्माज्ञाय अर्घ्यं नि ।
संसार राग-द्वेषों का मूल है महावन ।
कोई भी नहीं सुखिया धनवान हो या निर्धन ॥
चारों ही गति में जाकर पाये हैं दुख अपारे ।
उत्तम है धर्म आर्किचन पार जो उतारे ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री संसारभावनारूपोत्तमार्किचन्यधर्माज्ञाय अर्घ्यं नि ।
जिय जन्मता अकेला मरता भी है अकेला ।
अरु पुण्यपाप का फल भी भोगता अकेला ॥
कोई न संगी साथी सब एकले विचारे ।
उत्तम है धर्म आर्किचन पार जो उतारे ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री एकत्वभावनारूपोत्तमार्किचन्यधर्माज्ञाय अर्घ्यं नि ।

॥ उत्तम आकिंचन्य ॥



भारतजु गौरववतु तीर्थ स्थान
"जैतन्य धाम"

॥ जैतन्य जैतन्यवतु राजधानी धाम



श्री उत्तम आकिंचन्य धर्म पूजन

निज आत्मा से सारे ही द्रव्य भिन्न जानो ।
अपने से तो अभिन्न यह आत्मा है मानो ॥
अन्यत्व भावना यह भाते हैं सुमुनि सारे ।
उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री अन्यत्वभावनारूपोत्तमाकिंचन्यधर्माज्ञाय अर्घ्यं नि. ।
तन सप्त धातु पूरित अपवित्र है सदा ही ।
मल-मूत्र से भरा है यह अशुचि है सदा ही ॥
पर शुद्ध बुद्ध चेतन चिद्रूप जीव सारे ।
उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री अशुचिभावनारूपोत्तमाकिंचन्यधर्माज्ञाय अर्घ्यं नि. ।
शुभ-अशुभ भाव दूषित संसार के हैं प्राणी ।
वसु कर्म बंध करते जो होते हैं अज्ञानी ॥
आस्रव को नाश करते मुनिराज साधु सारे ।
उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री आस्रवभावनारूपोत्तमाकिंचन्यधर्माज्ञाय अर्घ्यं नि. ।

॥ उत्तम आर्किचन्य ॥



भारतनु गौरववन्तु तीर्थ स्थान

"जैतन्य धाम"

॥ जैतन्य जैतन्यवन्तु राजधानी धाम



श्री उत्तम आर्किचन्य धर्म पूजन

आस्रव निरोध संवर शुभ अशुभ भाव नाशक ।
जो धारते हैं संवर बनते स्वपर प्रकाशक ॥
जो आस्रव से जुड़ते पाते हैं दुख बिचारे ।
उत्तम है धर्म आर्किचन पार जो उतारे ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री संवरभावनारूपोत्तमाकिंचन्यधर्माज्ञाय अर्घ्यं नि. ।
सविपाक निर्जरा तो बिलकुल अकाम होती ।
अविपाक निर्जरा ही कर्मों के मल को धोती ॥
है शुद्ध निर्जरा के स्वामी सुमुनि हमारे ।
उत्तम है धर्म आर्किचन पार जो उतारे ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री निर्जराभावनारूपोत्तमाकिंचन्यधर्माज्ञाय अर्घ्यं नि. ।
छह द्रव्य से पूरित है यह तीन लोक सारा ।
चारों ही गति के दुख से दुखिया है जगत सारा ॥
जो जग स्वरूप समझे वह आत्मा संवारे ।
उत्तम है धर्म आर्किचन पार जो उतारे ॥१०॥
ॐ ह्रीं श्री लोकभावनारूपोत्तमाकिंचन्यधर्माज्ञाय अर्घ्यं नि. ।

॥ उत्तम आकिंचन्य ॥



भारतजु गौरववतु तीर्थ स्थान

"जैतन्य धाम"

॥ जैतन्य जैतन्यवतु राजधानी धाम



श्री उत्तम आकिंचन्य धर्म पूजन

वस्तुस्वरूप समझो निज बोधि प्राप्त कर लो ।

त्रय लोक में जो दुर्लभ वह पाके कष्ट हर लो ॥

जो हैं यथार्थ ज्ञानी भवभोग से वे हारे ।

उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री बोधिदुर्लभभावनारूपोत्तमाकिंचन्यधर्माज्ञाय अर्घ्यं नि ।

जो धर्म धारते हैं रत्नत्रयी हृदय में ।

वे आत्मधर्म पाकर जाते हैं शिव निलय में ॥

निज आत्म धर्म आश्रय लेते हैं सुमुनि सारे ।

उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री धर्मभावनारूपोत्तमाकिंचन्यधर्माज्ञाय अर्घ्यं नि ।

माता पिता सुतादिक नारी व भ्रात है पर ।

गज अश्व आदि चेतन सारे के सारे नश्वर ॥

संग इनका त्याग दो तो पाओगे सुख सारे ।

उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री चेतनरूपबाह्यपरिग्रहत्यागआकिंचन्यधर्माज्ञाय अर्घ्यं नि ।

॥ उत्तम आकिंचन्य ॥



भारतनु गौरववतु तीर्थ स्थान
"शैतन्य धाम"

॥ शैतन्य धाम ॥



श्री उत्तम आकिंचन्य धर्म पूजन

सोना व रत्न चांदी बहु ग्राम अचेतन गृह ।

निर्जीव राग छोड़ो हो जाओ इनसे निस्पृह ॥

बहिरंग परिग्रह तज आनंद पाओ सारे ।

उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे ॥१४॥

ॐ ह्रीं श्री अचेतनरूपबाह्यपरिग्रहत्यागआकिंचन्यधर्माज्ञाय अर्घ्यं नि. ।

ये राग-द्वेष आदिक अंतर में जो होते हैं ।

चारों ही गति के क्लेशों का बीज ये बोते हैं ॥

परिग्रह ये अंतरंगी त्यागो सदा को सारे ।

उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे ॥१५॥

ॐ ह्रीं श्री अंतरंगपरिग्रहत्यागआकिंचन्यधर्माज्ञाय अर्घ्यं नि. ।

निर्ग्रंथ दिगंबर मुनि बनना तुम्हें पड़ेगा ।

निज आत्मा के भीतर अड़ना तुम्हें पड़ेगा ॥

हो जाओगे अकिंचन परभाव त्याग सारे ।

उत्तम है धर्म आकिंचन पार जो उतारे ॥१६॥

ॐ ह्रीं श्री विविधपरिग्रहत्यागआकिंचन्यधर्माज्ञाय अर्घ्यं नि. ।

॥ उत्तम आर्किचन्य ॥



भारतजुं गौरवतुं तीर्थ स्थान

"शैतन्य धाम"

॥ शैतन्य शैतन्यतुं सभवनुं धाम



श्री उत्तम आर्किचन्य धर्म पूजन

जयमाला

(छंद-दिग्पाल)

पाया है हमने अब तो संसार का किनारा ।

सम्यक्त्व को पाकर के निज ज्ञान उर में धारा ॥
चारित्र धारते ही संयम भी उर में आया ।

रत्नत्रय हमने पाया जो है सदा हमारा ॥
ध्यानाग्नि प्रज्वलित कर कर्मों को जलाया है ।

निर्भार हो गए हम पाया है सुख अपारा ॥
निर्ग्रंथ सुमुनि बनकर शुद्धोपयोग भाया ।

अतएव स्व-तरणी को भवपार अब उतारा ॥
अनुभव स्वरस को पीकर निजध्यान लगाया था ।

निज भक्ति से मिला है शुद्धात्मा हमारा ॥
ध्रुवधाम के सदा को हम बन गए हैं स्वामी ।

जड़ देह से पृथक् हो निज आत्मा संवारा ॥

॥ उत्तम आर्किचन्य ॥



भारतजुं गौरववंतु तीर्थ स्थान

"शैतन्य धाम"

॥ शैतन्य शैतन्यवंतु सभवनु धाम



श्री उत्तम आर्किचन्य धर्म पूजन

अपरिग्रही आर्किचन जब हृदय में आता है।

गुंजायमान होता है तब आत्मा हमारा।

गुणगान आर्किचन का मुनिराज ही करते हैं।

कब प्राप्त हो आर्किचन अब यही उर में धारा ॥

(दोहा)

आर्किचन निज धर्म की महिमा अपरंपार।

जो भी इसको धारते पाते हैं भवपार ॥

आशीर्वाद

(छंद-सोरठा)

पूर्ण अर्घ्य अर्पण करूँ आर्किचन गुणधाम।

अपरिग्रह धारण करूँ पाऊँ निजध्रुवधाम ॥

इत्याशीर्वादः

जाप्य मंत्र – ॐ ह्रीं श्री उत्तमआर्किचन्यधर्माङ्गाय नमः ।